IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 10, June 2026
Impact Factor: 8.2

कर्मयोग: नैतिकता, कर्तव्य और उत्तरदायित्व
(श्रीमद्भगवद्गीता के सन्दर्भ में एक शोधात्मक अध्ययन)

Dr. Krishna Sarkar

Assistant Professor, Department of Swasthavritta and yoga

Future Institute of Ayurveda Medical Sciences, Bareilly, Uttarpradesh

सारांश-

कर्मयोग भारतीय दार्शनिक परम्परा का एक केन्द्रीय सिद्धान्त है, जिसका सर्वाधिक प्रामाणिक और व्यवस्थित प्रतिपादन श्रीमद्भगवद्गीता में प्राप्त होता है। कर्मयोग केवल कर्म करने की प्रेरणा नहीं देता, बल्कि कर्म को नैतिकता, कर्तव्यबोध और उत्तरदायित्व से जोड़कर मानव जीवन को एक उच्च आध्यात्मिक एवं सामाजिक दिशा प्रदान करता है। गीता का कर्मयोग मनुष्य को निष्काम भाव से कर्म करने, फलासक्ति के त्याग तथा लोककल्याण को जीवन का उद्देश्य बनाने की शिक्षा देता है। प्रस्तुत शोधपत्र में कर्मयोग की अवधारणा, उसके नैतिक आयाम, कर्म एवं उत्तरदायित्व के आपसी सम्बन्ध, सामाजिक और प्रशासनिक सन्दर्भ तथा आधुनिक युग में उसकी प्रासङ्गिकता का गीता के श्लोकों, अर्थ और दार्शनिक विश्लेषण के साथ विस्तारपूर्वक अध्ययन किया गया है। श्रीमद्भगवद्गीता का मुख्य प्रतिपाद्य विषय 'कर्मयोग' है। जब अर्जुन कर्तव्यविमूढ़ होकर अपने ही सगे-संबंधियों के विरुद्ध युद्ध करने से पीछे हट रहे थे, तब भगवान श्रीकृष्ण ने उन्हें कर्मयोग का उपदेश दिया। वर्तमान २१वीं सदी में, जहाँ भौतिकतावादी दृष्टिकोण, मानसिक तनाव और नैतिक मूल्यों का ह्रास चरम पर है, वहाँ गीता का कर्मदर्शन प्रासंगिक हो जाता है। यह शोधपत्र श्रीमद्भगवद्गीता के कर्मयोग के त्रिविध आयामों—नैतिकता (Morality), कर्तव्य (Duty), और उत्तरदायित्व (Responsibility) का एक गहन और विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। जो मानव मन के अन्तर्द्वन्द्व और व्यावहारिक जीवन की समस्याओं का शाश्वत समाधान है।

मुख्य शब्द:- कर्मयोग, नैतिकता, कर्म, उत्तरदायित्व, निष्काम कर्म, स्वधर्म, श्रीमद्भगवद्गीता।

भूमिका-

भारतीय दर्शन में कर्म को जीवन की अनिवार्य प्रक्रिया माना गया है। उपनिषदों, स्मृतियों और महाकाव्यों में कर्म, पुनर्जन्म और मोक्ष का घनिष्ठ सम्बन्ध बताया गया है। श्रीमद्भगवद्गीता में कर्म को न तो त्याज्य माना गया है और न ही केवल भोग का साधन, बल्कि आत्मोन्नति और लोककल्याण का मार्ग बताया गया है। महाभारत के युद्धभूमि में अर्जुन का विषाद केवल व्यक्तिगत समस्या नहीं है, बल्कि वह समस्त मानवता के उस द्वन्द्व का प्रतीक है, जहाँ नैतिकता, कर्तव्य और उत्तरदायित्व आपस में टकराते प्रतीत होते हैं। भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन को कर्मयोग का उपदेश देकर यह स्पष्ट करते हैं कि जीवन में कर्म से पलायन सम्भव नहीं है। कोई भी मनुष्य क्षणमात्र भी बिना कर्म किए नहीं रह सकता। यह श्लोक कर्म की अनिवार्यता को प्रतिपादित करता है और कर्मयोग की भूमिका तैयार करता है।

श्रीमद्भगवद्गीता का मुख्य प्रतिपाद्य विषय 'कर्मयोग' है। जब अर्जुन कर्तव्यविमूढ़ होकर अपने ही सगे-संबंधियों के विरुद्ध युद्ध करने से पीछे हट रहे थे, तब भगवान श्रीकृष्ण ने उन्हें कर्मयोग का उपदेश दिया। ये उपदेश श्रीकृष्ण अर्जुन के माध्यम से समग्र विश्व को दिया है। वर्तमान २१वीं सदी में, जहाँ भौतिकतावादी दृष्टिकोण, मानसिक तनाव और नैतिक मूल्यों का ह्रास चरम पर है, वहाँ गीता का कर्मदर्शन प्रासंगिक हो जाता है। यह शोधपत्र श्रीमद्भगवद्गीता के कर्मयोग के त्रिविध आयामों- नैतिकता (Morality), कर्तव्य (Duty), और उत्तरदायित्व (Responsibility) का एक गहन और विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है।

- **कर्मयोग की अवधारणा-** कर्मयोग दो शब्दों के मेल से बना है- 'कर्म' और 'योग'। 'कर्म' का अर्थ है चेष्टा, क्रिया या सम्पादन; और 'योग' का अर्थ है जुड़ना, समत्व या कुशलता। कर्मयोग का शाब्दिक अर्थ है- कर्म के माध्यम से योग, अर्थात् ईश्वर या परमसत्य से जुड़ना। श्रीमद्भगवद्गीता में कर्मयोग को जीवन का व्यावहारिक दर्शन कहा गया है। श्रीमद्भगवद्गीता के अनुसार, कर्म से भागना जीवन का समाधान नहीं है। कर्मयोग न तो सन्न्यास का विरोधी है और न ही भोगवाद का समर्थक, बल्कि यह सन्तुलन का मार्ग है। भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं—

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 10, June 2026 Impact Factor: 8.2

योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनञ्जय।
सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते॥[i]

इस श्लोक में कर्मयोग का मूल सिद्धान्त निहित है- कर्म करते हुए आसक्ति का त्याग और सफलता–असफलता में समभाव। यहाँ योग का अर्थ मानसिक सन्तुलन और नैतिक दृढ़ता से है।

न कर्मणामनारम्भान्नैष्कर्म्यं पुरुषोऽश्नुते ।
न च सन्न्यसनादेव सिद्धिं समधिगच्छति ॥[ii]

अर्थात्, मनुष्य न तो कर्मों का आरंभ किए बिना निष्कर्मता (ज्ञाननिष्ठा) को प्राप्त होता है और न कर्मों के केवल त्याग मात्र से सिद्धि को प्राप्त होता है। आगे इसी सिद्धांत को पुष्ट करते हुए कहा गया है-

न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्।
कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः॥[iii]

अर्थात्, कोई भी मनुष्य किसी भी काल में क्षण मात्र भी कर्म किए बिना नहीं रह सकता; क्योंकि प्रकृति जन्य गुण (सत्व, रज, तम) सभी को कर्म करने के लिए विवश करते हैं। अतः कर्म अपरिहार्य है। कर्म का त्याग नहीं, बल्कि कर्म के प्रति आसक्ति का त्याग ही वास्तविक योग है।

- **कर्मों का वर्गीकरण: कर्म, अकर्म और विकर्म (Classification of Action)-** कर्म की गति अत्यंत सूक्ष्म है। इसलिए मनुष्य को कर्म, विकर्म और अकर्म तीनों को ठीक से समझना चाहिए। इस विषय में श्रीमद्भगवद्गीता के चौथे अध्याय में इसका विस्तृत विवेचन किया गया है-

कर्मणो ह्यपि बोद्धव्यं बोद्धव्यं च विकर्मणः।
अकर्मणश्च बोद्धव्यं गहना कर्मणो गतिः॥[iv]

कर्म का प्रकार	अर्थ और परिभाषा	नैतिक दृष्टिकोण
१. कर्म	शास्त्रों और समाज द्वारा सम्मत नियत कर्तव्य (स्वधर्म)।	यह अनुकरणीय और कल्याणकारी है।
२. विकर्म	शास्त्र विरुद्ध, अनैतिक, और निषिद्ध कार्य (पाप कर्म)।	यह सर्वथा वर्जित और विनाशकारी है।
३. अकर्म	बाह्य रूप से कर्म करते हुए भी भीतर से फल की आसक्ति और अहंकार से शून्य होना।	यह सर्वोच्च आध्यात्मिक और नैतिक अवस्था है।

जो मनुष्य इस भेद को जान लेता है, वह 'कर्मणि अकर्म' और 'अकर्मणि कर्म' को देखने में सक्षम हो जाता है:

कर्मण्यकर्म यः पश्येदकर्मणि च कर्म यः।
स बुद्धिमान्मनुष्येषु स युक्तः कृत्स्नकर्मकृत्॥[v]

अर्थात् जो व्यक्ति कर्म में अकर्म (कर्म करते हुए भी लिप्त न होना) और अकर्म में कर्म (निष्क्रियता में भी मानसिक संकल्प को पहचानना) देखता है, वही मनुष्यों में बुद्धिमान है।

- **गुणात्मक दृष्टिकोण: सात्त्विक, राजस और तामस कर्म-** श्रीमद्भगवद्गीता के १८वें अध्याय में कर्म, कर्ता और बुद्धि को प्रकृति के तीन गुणों (सत्व, रज, तम) के आधार पर विभाजित किया गया है। यह वर्गीकरण आधुनिक मनोविज्ञान और कार्यस्थल के व्यवहार (Organizational Behavior) को समझने में अत्यंत सहायक है।

त्रिविध कर्म-

1. **सात्त्विक कर्म-** जो कर्म शास्त्रविधि से नियत किया गया हो, कर्तापन के अभिमान से रहित हो, और राग-द्वेष के बिना केवल फल की इच्छा न रखने वाले पुरुष द्वारा किया गया हो, वह सात्त्विक कहलाता है-

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 10, June 2026 Impact Factor: 8.2

नियतं सङ्गरहितमरागद्वेषतः कृतम् ।
अफलप्रेप्सुना कर्म यत्तत्सात्त्विकमुच्यते ॥[vi]

2. **राजस कर्म-** जो कर्म बहुत परिश्रम से युक्त, भोगों की इच्छा वाले या अहंकार से युक्त पुरुष द्वारा किया जाता है, वह राजस कर्म है-

यत्तु कामेप्सुना कर्म साहङ्कारेण वा पुनः ।
क्रियते बहुलायासं तद्राजसमुदाहृतम् ॥[vii]

3. **तामस कर्म-** जो कर्म परिणाम, हानि, हिंसा और अपनी सामर्थ्य का विचार किए बिना केवल अज्ञान या मोहवश प्रारंभ किया जाता है, वह तामस कर्म है-

अनुबन्धं क्षयं हिंसामनवेक्ष्य च पौरुषम् ।
मोहादारभ्यते कर्म यत्तत्तामसमुच्यते ॥[viii]

➢ **त्रिविध कर्ता (The Three Types of Doers)-** श्रीमद्भगवद्गीता में कर्म अनुसार त्रिविध कर्ता के वर्णन किया गया है-

- **सात्त्विक कर्ता:** मुक्तसंगोऽनहंवादी धृत्युत्साहसमन्वितः (आसक्तिरहित, अहंकारशून्य, धैर्य और उत्साह से युक्त) [१४]।[ix]
- **राजस कर्ता:** रागी कर्मफलप्रेप्सुर्लुब्धो हिंसात्मकोऽशुचिः (आसक्ति युक्त, फल चाहने वाला, लोभी और क्रूर) [१५]।[x]
- **तामस कर्ता:** अयुक्तः प्राकृतः स्तब्धः शठो नैष्कृतिकोऽलसः (असावधान, अशिष्ट, घमंडी, ठग और आलसी) [१६]।[xi]

➢ **कर्मयोग और नैतिकता-** श्रीमद्भगवद्गीता की नैतिकता उपयोगितावादी (Utilitarian) या केवल परिणामवादी (Consequentialist) नहीं है। यह 'निष्काम कर्म' (Desireless Action) पर आधारित है, इस विषय में स्वामी विवेकानन्द कहा है- 'कर्तव्य के लिए कर्तव्य' (Duty for duty)। नैतिकता कर्मयोग का आधार स्तम्भ है। श्रीमद्भगवद्गीता में नैतिक कर्म को 'यज्ञ' कहा गया है। यज्ञ का अर्थ केवल वैदिक अग्निहोत्र नहीं, बल्कि लोकहित के लिए किया गया प्रत्येक निष्काम कर्म है-

यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः।
तदर्थं कर्म कौन्तेय मुक्तसङ्गः समाचर॥[xii]

इस श्लोक के अनुसार, जो कर्म यज्ञ अर्थात् लोककल्याण की भावना से किया जाता है, वही मनुष्य को कर्मबन्धन से मुक्त करता है। नैतिकता का तात्पर्य केवल व्यक्तिगत सदाचार नहीं, बल्कि सामाजिक उत्तरदायित्व से भी है।

- **निष्काम कर्म का नैतिक सिद्धान्त-** कर्मयोग का सर्वाधिक प्रसिद्ध और महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त निष्काम कर्म है। श्रीमद्भगवद्गीता में इस सिद्धान्त को कर्मयोग की आत्मा माना जाता है। नैतिकता का सर्वोच्च स्तर वह है, जहाँ मनुष्य कर्म किसी व्यक्तिगत लाभ, भय या प्रलोभन के लिए नहीं करता, बल्कि इसलिए करता है क्योंकि वह कर्म न्यायसंगत और सत्य है।

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि॥[xiii]

इस श्लोक के अनुसार मनुष्य का अधिकार केवल कर्म करने में है, फल पर नहीं। फल की आसक्ति ही लोभ, भय, तनाव और अनैतिक आचरण को जन्म देती है। निष्काम कर्म व्यक्ति को मानसिक शान्ति और नैतिक दृढ़ता प्रदान करता है।

यह श्लोक श्रीमद्भगवद्गीता के नैतिक दर्शन का प्राण है। इसके चार मुख्य स्तम्भ हैं-

I. कर्म करने में ही तुम्हारा अधिकार है।
II. फल पर तुम्हारा कोई नियंत्रण नहीं है।
III. कर्मफल के प्रेरक मत बनो (अर्थात् अहंकार से बचो)।
IV. कर्म न करने (अकर्मण्यता) में भी तुम्हारी आसक्ति न हो।

जब मनुष्य फल की चिंता छोड़ देता है, तो वह मानसिक उद्वेग, ईर्ष्या और अवसाद से मुक्त हो जाता है। यही निष्काम भावना नैतिक आचरण को जन्म देती है।

- **मानसिक समता-** नैतिकता का एक अन्य पहलू है सुख-दुःख, लाभ-हानि और जय-पराजय में सम रहना-

योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनञ्जय ।
सिद्ध्यासिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते ॥

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 10, June 2026 Impact Factor: 8.2

जब कर्ता का मन सफलता और असफलता में समान रहता है, तब उसके द्वारा किए गए कर्मों में स्वार्थपरता नहीं होती। ऐसा व्यक्ति कभी अनैतिक साधनों का उपयोग नहीं करेगा, क्योंकि उसे परिणाम को अपने पक्ष में मोड़ने का कोई लोभ नहीं होता।

- **कर्मयोग और नेतृत्व-** श्रीमद्भगवद्गीता का कर्मयोग आदर्श नेतृत्व का दर्शन भी प्रस्तुत करता है। एक कर्मयोगी नेता अपने पद को सेवा का माध्यम मानता है। वह निर्णय लेते समय व्यक्तिगत लाभ के बजाय लोककल्याण को प्राथमिकता देता है। आधुनिक प्रशासन, राजनीति और प्रबन्धन के क्षेत्र में कर्मयोग नैतिक नेतृत्व की सुदृढ़ आधारशिला बन सकता है।

➢ **कर्मयोग और कर्तव्य-** श्रीमद्भगवद्गीता में कर्तव्य को 'स्वधर्म' के रूप में परिभाषित किया गया है। स्वधर्म का अर्थ किसी संकीर्ण जाति व्यवस्था से नहीं, बल्कि व्यक्ति की आंतरिक प्रकृति (गुण) और समाज में उसकी स्थिति (कर्म) के अनुसार निर्धारित उत्तरदायित्व से है।

- **स्वधर्म का सिद्धान्त-** श्रीमद्भगवद्गीता मानती है कि प्रत्येक व्यक्ति अपनी अद्वितीय क्षमताओं और प्रवृत्तियों के साथ जन्म लेता है। समाज की उन्नति तभी सम्भव है जब प्रत्येक व्यक्ति अपनी प्रकृति के अनुकूल कर्तव्यों का पालन करे।

श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात्।
स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः॥[xiv]

दूसरों के कर्तव्य (परधर्म) का अच्छी तरह अनुष्ठान करने की अपेक्षा दोषयुक्त भी अपना कर्तव्य (स्वधर्म) श्रेष्ठ है। अपने कर्तव्य का पालन करते हुए मृत्यु भी कल्याणकारी है, जबकि दूसरों का कर्तव्य भय उपजाने वाला है। जैसे एक शिक्षक का स्वधर्म पढ़ाना है, एक सैनिक का रक्षा करना और एक चिकित्सक का उपचार करना। जब कोई अपने स्वधर्म को छोड़कर दूसरों के क्षेत्र में अवांछित हस्तक्षेप करता है या ईर्ष्यावश भागता है, तो सामाजिक असन्तुलन पैदा होता है।

- **सहज कर्म का महत्व-** मनुष्य को अपने स्वाभाविक कर्मों का त्याग नहीं करना चाहिए, भले ही उनमें कुछ कमियाँ दिखाई दें-

सहजं कर्म कौन्तेय सदोषमपि न त्यजेत्।
सर्वारम्भा हि दोषेण धूमेनाग्निरिवावृताः॥[xv]

जैसे अग्नि धुएं से ढकी रहती है, वैसे ही संसार के सभी कर्म किसी न किसी दोष से आवृत होते हैं। इसलिए, दोषों के डर से अपने नियत कर्तव्य से पीछे हटना कायरता है।

➢ **कर्मयोग और उत्तरदायित्व-** उत्तरदायित्व का अर्थ है अपने कर्मों के परिणामों की जिम्मेदारी लेना और समाज के प्रति जवाबदेह होना। श्रीमद्भगवद्गीता इस अवधारणा को 'लोकसंग्रह' और 'श्रेष्ठ आचरण' के माध्यम से प्रस्तुत करती है।

- **लोकसंग्रह-** श्रीमद्भगवद्गीता व्यक्तिवादी दर्शन नहीं है; यह समष्टि (समाज) के कल्याण की बात करती है। कृष्ण अर्जुन को युद्ध करने के लिए प्रेरित करते हुए कहते हैं कि तुम्हें समाज के मार्गदर्शन के लिए कर्म करना चाहिए-

कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः।
लोकसङ्ग्रहमेवापि संपश्यन्कर्तुमर्हसि ॥[xvi]

राजा जनक जैसे महापुरुषों ने भी लोकसंग्रह (समाज के कल्याण और सुव्यवस्था) को ध्यान में रखकर ही कर्म द्वारा सिद्धि प्राप्त की थी। अतः तुम्हें भी समाज को सन्मार्ग पर रखने के लिए उत्तरदायित्वपूर्ण कर्म करना चाहिए।

- **श्रेष्ठ आचरण और सामाजिक उत्तरदायित्व-** कर्मयोग केवल व्यक्तिगत मोक्ष का साधन नहीं, बल्कि सामाजिक समरसता का भी मार्ग है। नेता, प्रबंधक या समाज के प्रबुद्ध वर्ग का यह उत्तरदायित्व है कि वे अपने आचरण को आदर्श बनाएं, क्योंकि सामान्य जन उनका अनुकरण करते हैं-

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः।
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते॥[xvii]

श्रेष्ठ पुरुष जो-जो आचरण करता है, अन्य लोग भी वैसा ही करते हैं। वह जिस प्रामाणिक आदर्श को स्थापित करता है, समस्त संसार उसका अनुसरण करने लगता है। यह श्लोक आधुनिक 'लीडरशिप' (Leadership) और नैतिक उत्तरदायित्व का सर्वोत्तम उदाहरण है। श्रेष्ठ व्यक्ति का आचरण समाज के लिए आदर्श बनता है। इसलिए कर्मयोग व्यक्ति पर यह उत्तरदायित्व डालता है कि वह अपने कर्म द्वारा समाज को सही दिशा प्रदान करे।

➢ **आधुनिक सन्दर्भ में कर्मयोग की प्रासंगिकता-** आधुनिक युग भौतिकता, प्रतिस्पर्धा और तनाव से ग्रस्त है। कर्मयोग व्यक्ति को यह सिखाता है कि वह कर्म करे, परन्तु कर्म के फल के प्रति अत्यधिक आसक्त न हो। शिक्षा, चिकित्सा, उद्योग और सामाजिक सेवा—हर क्षेत्र में कर्मयोग नैतिकता और उत्तरदायित्व की भावना को सुदृढ़ कर सकता है। श्रीमद्भगवद्गीता का कर्मयोग आधुनिक युग की कई ज्वलंत समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करता है-

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 10, June 2026 Impact Factor: 8.2

- **कार्यस्थल पर तनाव प्रबन्धन (Stress Management at Workplace)-** आधुनिक कॉर्पोरेट जगत में 'बर्नआउट' (Burnout) और मानसिक अवसाद एक बड़ी समस्या हैं। इसका मुख्य कारण परिणाम के प्रति अत्यधिक आसक्ति और असफल होने का डर है। श्रीमदभगवद्गीता का 'मा फलेषु कदाचन' का सिद्धान्त व्यक्ति को प्रक्रिया (Process) पर ध्यान केन्द्रित करने की प्रेरणा देता है, न कि केवल परिणाम (Outcome) पर। इससे कार्यक्षमता (Efficiency) बढ़ती है और मानसिक तनाव कम होता है।
- **व्यावसायिक नैतिकता (Professional Ethics)-** आज भ्रष्टाचार, घोटालों और कॉर्पोरेट लालच के मूल में 'राजस' और 'तामस' प्रवृत्तियों की अधिकता है। गीता का 'लोकसंग्रह' का सिद्धान्त याद दिलाता है कि व्यवसाय या संगठन का उद्देश्य केवल निजी लाभ कमाना नहीं, बल्कि समाज का पोषण करना भी है।
- **संकट के समय निर्णय क्षमता (Decision Making in Crisis)-** अर्जुन की तरह आज का आधुनिक मानव भी जीवन के मोड़ों पर 'किंकर्तव्यविमूढ़' (भ्रमित) हो जाता है। श्रीमदभगवद्गीता सिखाती है कि भावनाओं के अतिरेक (अति-आसक्ति या अति-भय) में बहकर अपने नैतिक दायित्वों से पीछे नहीं हटना चाहिए। न्याय और सत्य की रक्षा के लिए लिया गया कठिन निर्णय ही वास्तविक उत्तरदायित्व है।

➢ **आलोचनात्मक मूल्यांकन-** कुछ विद्वानों का मत है कि निष्काम कर्म व्यवहारिक नहीं है, किन्तु श्रीमदभगवद्गीता का कर्मयोग फल-त्याग नहीं, फलासक्ति-त्याग की शिक्षा देता है। यह दृष्टिकोण व्यक्ति को अधिक कर्मशील और उत्तरदायी बनाता है।

निष्कर्ष (Conclusion)- कर्मयोग श्रीमद्भगवद्गीता का हृदय है। यह नैतिकता, कर्म और उत्तरदायित्व को एक सूत्र में बांधता है। कर्मयोग व्यक्ति को कर्तव्यनिष्ठ, समाजोन्मुख और आध्यात्मिक रूप से जागरूक बनाता है। वर्तमान वैश्विक संकटों के समाधान हेतु कर्मयोग एक सार्वकालिक और सार्वभौमिक दर्शन प्रस्तुत करता है।

श्रीमद्भगवद्गीता का कर्मयोग दर्शन पलायनवाद का विरोध करता है और पुरुषार्थ का मंडन करता है। यह मनुष्य को संसार से भागने का निर्देश नहीं देता, बल्कि संसार में रहकर, अपने समस्त सामाजिक और नैतिक दायित्वों को निभाते हुए अनासक्त रहने की कला सिखाता है। नैतिकता के धरातल पर यह 'निष्काम कर्म' और 'समत्व' की स्थापना करता है। कर्तव्य के स्तर पर यह 'स्वधर्म' के प्रति निष्ठा और व्यावसायिक प्रामाणिकता को अनिवार्य बनाता है। उत्तरदायित्व के संदर्भ में यह 'लोकसंग्रह' के माध्यम से समाज के अंतिम व्यक्ति के प्रति जवाबदेही तय करता है। श्रीमद्भगवद्गीता के अनुसार कर्मयोगी वह है जो भीतर से सन्यासी है और बाहर से कर्मठ योद्धा। जब तक मानव सभ्यता अस्तित्व में रहेगी, गीता का यह व्यावहारिक और शाश्वत कर्मदर्शन मानवता का मार्गदर्शन करता रहेगा।

सन्दर्भ-सूची

[i] श्रीमद्भगवद्गीता 2/48
[ii] श्रीमद्भगवद्गीता 3/4
[iii] श्रीमद्भगवद्गीता 3/5
[iv] श्रीमद्भगवद्गीता 4/17
[v] श्रीमद्भगवद्गीता 4/18
[vi] श्रीमद्भगवद्गीता 18/23
[vii] श्रीमद्भगवद्गीता 18/24
[viii] श्रीमद्भगवद्गीता 18/25
[ix] श्रीमद्भगवद्गीता 18/26
[x] श्रीमद्भगवद्गीता 18/27
[xi] श्रीमद्भगवद्गीता 18/28
[xii] श्रीमद्भगवद्गीता 3/9
[xiii] श्रीमद्भगवद्गीता 2/47

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 10, June 2026
Impact Factor: 8.2

[xiv] श्रीमद्भगवद्गीता 3/35

[xv] श्रीमद्भगवद्गीता 18/48

[xvi] श्रीमद्भगवद्गीता 3/20

[xvii] श्रीमद्भगवद्गीता 3/21

संदर्भ ग्रन्थ-सूची-

1. **श्रीमद्भगवद्गीता (तत्वविवेचनी टीका),** जयदयाल गोयन्दका, गीताप्रेस, गोरखपुर।
2. **गीता रहस्य,** बाल गङ्गाधर तिलक, तिलक ब्रदर्स प्रकाशन।
3. **अनासक्ति योग,** महात्मा गांधी, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद।
4. **The Bhagavad Gita,** स्वामी चिन्मयानन्द, सेन्ट्रल चिन्मय मिशन ट्रस्ट, मुम्बई।
5. **Essays on the Gita** – श्री अरबिन्दो, श्री अरबिन्दो आश्रम, पुदुचेरी।
6. **भारतीय दर्शन (Indian Philosophy - Vol. I & II)** – डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन, जॉर्ज एलेन एण्ड अनविन, लन्दन।